एक परिचय

अध्ययन करते हुए, हम देखेंगे कि यीशु नासरी परमेश्वर का पुत्र और परमेश्वर पुत्र दोनों ही है। यह पूर्व निश्चित निष्कर्ष की तरह लग सकता है, परन्तु यह बात चौंकाने वाली है कि पृथ्वी के करोड़ों निवासियों में से, बहुतों ने मसीही विश्वास को, कि यीशु परमेश्वर है, नहीं माना है। निम्न धार्मिक आंकड़ों पर ध्यान दें:[1]

मसीह में विश्वास करने वाले सम्प्रदाय	33.5 प्रतिशत	1.87 बिलियन
मसीह में विश्वास न करने वाले सम्प्रदाय	45.7 प्रतिशत	2.55 बिलियन
नास्तिक तथा अधार्मिक	20.8 प्रतिशत	1.16 बिलियन
कुल जनसंख्या		5.58 बिलियन

इन आंकड़ों के अवलोकन से यीशु की ईश्वरीयता मुख्य केन्द्र बिंदु बन जाती है। इनसे कई महत्वपूर्ण प्रश्न भी उठते हैं, जैसे करोड़ों लोगों को यीशु की कहानी का पता क्यों नहीं है? उन्हें उसके बारे में पता क्यों नहीं चला? निस्संदेह, इन प्रश्नों में से प्रत्येक का उत्तर विश्वस्तर पर सुसमाचार के प्रचार तथा मिशनरी कार्य में पाई पाने वाली त्रुटि में पाया जाता है।

अगले दो प्रश्न हमारे सामने उस चुनौती को रखते हैं जिससे हम इस अध्ययन में संघर्ष करेंगे। (1) बहुत से लोग जिन्होंने यीशु के बारे में सुना है, उस पर विश्वास क्यों नहीं करते? (2) बहुत से लोग जो उसे परमेश्वर का पुत्र तो मानते हैं परन्तु परमेश्वर पुत्र क्यों नहीं मानते?

इन प्रश्नों का हर व्यक्ति का अपना ही उत्तर है। कई लोग तो बाहर से दिखने वाले लगेंगे, परन्तु दूसरे इस उलझन से उत्पन्न हुई पीड़ा को प्रकट कर उससे आगे बढ़ जाएंगे। यीशु के विषय में इस उलझन का कारण त्रुटिपूर्ण या असमय दी गई शिक्षा की प्रक्रिया हो सकता है। कई वर्ष पहले जिम जोन्स[2] के सम्प्रदाय की त्रासदियों की तरह बहुत से लोगों में मसीह की स्पष्ट सच्चाई के विषय में संदेह उपन्न होना स्वाभाविक ही है। जिन्हें यदि यीशु के विषय में और उसकी शिक्षा की सारी बातों को तर्कसंगत ढंग से समझाया जाता तो वे उसे ग्रहण कर लेते।

यीशु पर विश्वास या उसे ग्रहण न करने का एक और कारण यह है कि बहुत से लोगों

को हम उन्हें उसके विलक्षण होने को ठीक तरह से समझा नहीं पाते। हो सकता है कि हमारा विश्वास यीशु में हो। और हम किसी दूसरे को उसके बारे में समझाने के लिए गम्भीर होकर यत्न कर रहे हों। परन्तु, यीशु के विषय में हमारी धारणा अस्पष्ट या ऊपरी ज्ञान जैसी हो सकती है। उसके विषय में कठिन प्रश्न आने पर हम परेशान हो सकते हैं। यीशु में हमारा विश्वास, विशेषकर यदि यह ''किसी और व्यक्ति से'' लिया गया है, इतना गहरा नहीं होगा कि उससे हम संदेहवाद के गूढ़ प्रश्नों का उत्तर नहीं दे पाएं। मैं यह नहीं कहता कि इससे हमारे विश्वास का इन्कार हो जाएगा। इसका अर्थ केवल यह है कि हमारा विश्वास इतना परिपक्व नहीं होगा या हमारे पास वे स्रोत या विश्वास की परिपक्वता नहीं हैं जिनसे हम यीशु के विषय में प्रश्न खोजने वाले के जीवन के खालीपन को भर सकें।

इस पर विचार कीजिये: आपने अगले रविवार अपने एक मित्र को आराधना में बुलाने के लिए कहने का मन बनाया है। मान लीजिये आपका मित्र कहता है, ''पिछले दिनों में, मैंने परमेश्वर की ओर मुड़ने और उसकी आराधना करने पर बहुत विचार किया है। परन्तु, तुम मसीही लोग तो तीन ईश्वरों को मानते हो। मैं यदि किसी धर्म को मानूंगा, तो केवल एक ही ईश्वर को मानूंगा। मेरा एक ही ईश्वर में विश्वास है। मैं तीन ईश्वरों वाले तुम्हारे मत को स्वीकार नहीं कर सकता हूं।'' आपकी क्या प्रतिक्रिया होगी? आपका उत्तर क्या होगा? आप अपनी बात को कैसे स्पष्ट करेंगे?

यदि आप परेशानी में पड़ जाते हैं, तो आप अकेले नहीं हैं। वास्तव में, पहली तथा दूसरी शताब्दियों में कलीसिया को यहूदियों तथा मूर्तिपूजक आराधकों को समझाना पड़ा था कि कैसे मसीहियत एकेश्वरवाद को मानती थी जो परमेश्वर पिता *और* परमेश्वर पुत्र के बारे में बात कर सकती थी।

अंतत: क्योंकि परमेश्वर की हमारी धारणा से ही हमारा धर्म निश्चित होता है, इसलिए हम आपको सच्चे मन से परमेश्वर पुत्र की अपनी इस जांच में शामिल होने का निमंत्रण देते हैं। आरम्भिक कलीसिया ने महसूस किया था कि उनके लिए लोगों को समझाना आवश्यक है कि परमेश्वर के बारे में मसीही विचार एकेश्वरवाद का था जिसमें परमेश्वर पिता और परमेश्वर पुत्र शामिल हैं। यदि वे ऐसा न करते, तो मसीहियत अपनी सच्चाई, सामर्थ, विलक्षणता और प्रासंगिकता खो बैठती।